पड़ता है, तब जाके कहीं माल बिकता है। मामूली आदमी तो राजाओं और नवाबों के सामने ही न जा सके। पहुँच ही न हो। और किसी तरह पहुँच भी जाय तो जबान न खुले। पहले-पहले तो इन्हें भी झिझक हुई थी, मगर अब तो इस सागर के मगर हैं। अगले साल तरक्की होने वाली है।

रूपकुमारी की धमनियों में रक्त की गति जैसे बन्द हुई जा रही है। निर्दयी आकाश गिर क्यों नहीं पड़ता! पाषाण-हृदया धरती फट क्यों नहीं जाती! यह कहाँ का न्याय है कि रूपकुमारी जो रूपवती है, तमीज़दार है, सुघड़ है, पति पर जान देती है, बच्चों को प्राणों से ज्यादा चाहती है, थोड़े में गृहस्थी को इतने अच्छे ढंग से चलाती है, उसकी तो यह दुर्गति, और यह घमण्डिन, बदतमीज, विलासिनी, चंचल, मुँहफट छोकरी, जो अभी तक सिर खोले घूमा करती थी, रानी बन जाए? मगर उसे अब भी कुछ आशा बाकी थी। शायद आगे चलकर उसके चित्त की शान्ति का कोई मार्ग निकल आये।

उसी परिहास के स्वर में बोली-तब तो शायद एक हजार मिलने लगें?

'एक हजार तो नहीं, पर छ- सौ में सन्देह नहीं?'

'कोई आँखों का अन्धा मालिक फँस गया होगा?'

व्यापारी आँखों के अन्धे नहीं होते दीदी! उनकी आँखें हमारी-तुम्हारी आँखों से कहीं तेज होती हैं। जब तुम उन्हें छ- हजार कमाकर दो, तब कहीं छ- सौ मिलें। जो सारी दुनिया को चराये उसे कौन बेवकूफ बनाएगा।'

परिहास से काम न चलते देखकर रूपकुमारी ने अपमान का अस्त्र निकाला-मैं तो इसे बहुत अच्छा पेशा नहीं समझती। सारे दिन झूठ के तूमार बाँधो। यह तो ठग-विद्या है!

रामदुलारी जोर से हँसी। बहन पर उसने पूरी विजय पायी थी।

'इस तरह तो जितने वकील-बैरिस्टर हैं; सभी ठग-विद्या करते हैं। अपने मुवक्किल के फायदे के लिए उन्हें क्या नहीं करना पड़ता? झूठी शहादतें तक बनानी पड़ती हैं। मगर उन्हीं वकीलों और बैरिस्टरों को हम अपना लीडर कहते हैं, उन्हें अपनी कौमी सभाओं का प्रधान बनाते हैं, उनकी गाडियाँ खींचते हैं, उन पर फूलों और अशर्फियों की वर्षा करते हैं, उनके नाम से सडकें, प्रतिमाएँ और संस्थाएँ बनाते हैं। आजकल दुनिया पैसा देखती है। आजकल ही क्यों? हमेशा से धन की यही महिमा रही है। पैसे कैसे आएँ, यह कोई नहीं देखता। जो पैसे वाला है, उसी की पूजा होती है। जो अभागे हैं, अयोग्य हैं, या भीरु हैं, वे आत्मा और सदाचार की दुहाई देकर अपने आँसू पोंछते हैं। नहीं, आत्मा और सदाचार को कौन पूछता है।'

रूपकुमारी खामोश हो गयी। अब उसे यह सत्य उसकी सारी वेदनाओं के साथ स्वीकार करना पड़ेगा कि रामदुलारी सबसे ज्यादा भाग्यवान है। इससे अब त्राण नहीं। परिहास या अनादर से वह अपनी तंगदिली का प्रमाण देने के सिवा और क्या पाएगी। उसे किसी बहाने से रामदुलारी के घर जाकर असलियत की छान-बीन करनी पड़ेगी। अगर रामदुलारी वास्तव में लक्ष्मी का वरदान पा गयी है तो रूपकुमारी अपनी किस्मत ठोंककर बैठ रहेगी। समझ लेगी कि दुनिया में कहीं न्याय नहीं है, कहीं ईमानदारी की पूछ नहीं है।

मगर क्या सचमुच उसे इस विचार से सन्तोष होगा? यहाँ कौन ईमानदार है? वही, जिसे बेईमानी करने का अवसर नहीं है और न इतनी बुद्धि या मनोबल है कि वह अवसर पैदा कर ले। उसके पति 75 रुपये पाते हैं; पर क्या दस-बीस रुपये और ऊपर से मिल जाएँ तो वह खुश होकर ले न लेंगे? उनकी ईमानदारी और सत्यवादिता उसी समय तक है, जब तक अवसर नहीं मिलता। जिस दिन मौका मिला, सारी सत्यवादिता धरी रह जाएगी। और क्या रूपकुमारी में इतना नैतिक बल है कि वह अपने पति को हराम का माल हज़म करने से रोक दे? रोकना तो दूर की बात है, वह प्रसन्न होगी, शायद पतिदेव की पीठ ठोकेगी। अभी उनके दफ्तर से आने के समय वह मन मारे बैठी रहती है। तब वह द्वार पर खड़ी होकर उनकी बाट जोहेगी, और ज्योंही वह घर में आएँगे, उनकी जेबों की तलाशी लेगी।

आँगन में गाना-बजाना हो रहा था। रामदुलारी उमंग के साथ गा रही थी, और रूपकुमारी वहीं बरामदे में उदास बैठी हुई थी। न जाने क्यों उसके सिर में दर्द होने लगा था। कोई गाये, कोई नाचे, उससे प्रयोजन नहीं। वह तो अभागिन है। रोने के लिए पैदा की गयी है।

नौ बजे रात को मेहमान रुखसत होने लगे। रूपकुमारी भी उठी। एक्का मँगवाने जा रही थी कि रामदुलारी ने कहा-एक्का मँगवाकर क्या करोगी बहन, मुझे लेने के लिए कार आती होगी; चलो दो-चार दिन मेरे यहाँ रहो, फिर चली जाना। मैं जीजाजी को कहला भेजूँगी तुम्हारा इन्तजार न करें।

रूपकुमारी का यह अन्तिम अस्त्र भी बेकार हो गया। रामदुलारी के घर जाकर हालचाल की टोल लेने की इच्छा गायब हो गयी। वह अब अपने घर जाएगी और मुँह ढाँपकर पड़ी रहेगी। इन फटेहालों में क्यों किसी के घर जाए। बोली-नहीं, अभी तो मुझे फुरसत नहीं है, बच्चे घबरा रहे होंगे। फिर कभी आऊँगी।

'क्या रात-भर भी न ठहरोगी?'

'नहीं।'

'अच्छा बताओ, कब आओगी? मैं सवारी भेज दूँगी।'

'मैं खुद कहला भेजूँगी।'

'तुम्हें याद न रहेगी। साल-भर हो गया, भूलकर भी याद न किया। मैं इसी इन्तजार में थी कि दीदी बुलावें तो चलूँ। एक ही शहर में रहते हैं, फिर भी इतनी दूर कि साल भर गुजर जाए और मुलाकात तक न हो।'

रूपकुमारी इसके सिवा और क्या कहे कि घर के कामों से छुट्टी नहीं मिलती। कई बार उसने इरादा किया कि दुलारी को बुलाये, मगर अवसर ही न मिला।

सहसा रामदुलारी के पति मि. गुरुसेवक ने आकर बड़ी साली को सलाम किया। बिलकुल अँगरेजी सज-धज, मुँह में चुरुट, कलाई पर सोने की घड़ी, आँखों पर सुनहरी ऐनक, जैसे कोई सिविलियन हो। चेहरे से जेहानत और शराफत बरस रही थी। वह इतना रूपवान् और सजीला है, रूपकुमारी को अनुमान न था। कपड़े जैसे उसकी देह पर खिल रहे थे।

आशीर्वाद देकर बोली-आज यहाँ न आती तो मुझसे मुलाकात क्यों होती!

गुरुसेवक हँसकर बोला-यह उलटी शिकायत! क्यों न हो। कभी आपने बुलाया और मैं न गया?

'मैं नहीं जानती थी कि तुम अपने को मेहमान समझते हो। वह भी तो तुम्हारा ही घर है।'

रामदुलारी देख रही थी कि मन में उससे ईर्ष्या रखते हुए भी वह कितनी वाणी-मधुर, कितनी स्निग्ध, कितनी अनुग्रह-प्रार्थिनी होती जा रही है।

गुरुसेवक ने उदार मन से कहा-हाँ, अब मान गया भाभी साहब, बेशक मेरी गलती है। इस दृष्टि से मैंने विचार नहीं किया था। मगर आज तो मेरे घर रहिए।

'नहीं आज बिलकुल अवकाश नहीं है। फिर कभी आऊँगी। लड़के घबरा रहे होंगे।'

रामदुलारी बोली-मैं कितना कहके हार गयी, मानती ही नहीं।

दोनों बहनें कार की पिछली सीट पर बैठीं। गुरुसेवक ड्राइव करता हुआ चला। जरा देर में उसका मकान आ गया। रामदुलारी ने फिर बहन से उतरने के लिए आग्रह किया, पर वह न मानी। लड़के घबरा रहे होंगे। आखिर रामदुलारी उससे गले मिलकर अन्दर चली गयी। गुरुसेवक ने कार बढ़ायी। रूपकुमारी ने उड़ती हुई निगाह से रामदुलारी का मकान देखा और वह ठोस सत्य एक शलाका की भाँति उसके कलेजे में चुभ गया।

कुछ दूर जाकर गुरुसेवक बोला-भाभी, मैंने तो अपने लिए अच्छा रास्ता निकाल लिया। अगर दो-चार साल इसी तरह काम करता रहा तो आदमी बन जाऊँगा।

रूपकुमारी ने सहानुभूति के साथ कहा-रामदुलारी ने मुझसे बताया था। भगवान् करे, जहाँ रहो, खुश रहो। मगर जरा हाथ-पैर सँभाल के रहना।

'मैं मालिक की आँख बचाकर एक पैसा भी लेना पाप समझता हूँ, भाभी। दौलत का मजा तो तभी है कि ईमान सलामत रहे। ईमान खोकर पैसे मिले तो क्या! मैं ऐसी दौलत को त्याज्य समझता हूँ, और आँख किसकी बचाऊँ। सब सियाह-सुफेद तो मेरे हाथ में है। मालिक तो रहा नहीं, केवल उसकी बेवा है। उसने सब कुछ मेरे हाथ में छोड़ रखा है। मैंने उसका कारोबार सँभाल न लिया होता तो सब कुछ चौपट हो जाता। मेरे सामने तो मालिक सिर्फ तीन महीने जिन्दा रहे। मगर आदमी को परखना खूब जानते थे। मुझे 100 रुपये पर रखा और एक महीने में 200 रुपये कर दिया। आप लोगों की दुआ से पहले ही महीने में मैंने बारह हजार का काम किया।'

'क्या काम करना पड़ता है?' रूपकुमारी ने बिना किसी उद्देश्य के पूछा।

'वही मशीनों की एजेण्टी' तरह-तरह की मशीनें मँगाना और बेचना।-ठण्डा जवाब था।

रूपकुमारी का मनहूस घर आ गया। द्वार पर एक लालटेन टिमटिमा रही थी। उसके पति उमानाथ द्वार पर टहल रहे थे। मगर रूपकुमारी ने गुरुसेवक से उतरने के लिए आग्रह नहीं किया। एक बार शिष्टाचार के नाते कहा जरूर पर जोर नहीं दिया, और उमानाथ तो गुरुसेवक से मुखातिब भी न हुए।

रूपकुमारी को वह घर अब कब्रिस्तान-सा लग रहा था, जैसे फूटा हुआ भाग्य हो। न कहीं फर्श, न फरनीचर, न गमले। दो-चार टूटी-टाटी तिपाइयाँ, एक लँगड़ी मेज, चार-पाँच पुरानी-पुरानी खाटें, यही उस घर की बिसात थी। आज सुबह तक रूपकुमारी इसी घर में खुश थी। लेकिन अब यह घर उसे काटे खा रहा है। लड़के अम्माँ-अम्माँ करके दौड़े, मगर उसने दोनों को झिडक़ दिया। उसके सिर में दर्द है, वह किसी से न बोलेगी, कोई उसे न छेड़े। अभी घर में खाना नहीं पका। पकाता कौन? लड़कों ने तो दूध पी लिया है, किन्तु उमानाथ ने कुछ नहीं खाया। इसी इन्तजार में थे कि रूपकुमारी आये तो पकाये। पर रूपकुमारी के सिर में दर्द है। मजबूर होकर बाजार से पूरियाँ लानी पड़ेंगी।

रूपकुमारी ने तिरस्कार के स्वर में कहा-तुम अब तक मेरा इन्तजार क्यों करते रहे? मैंने तो खाना पकाने की नौकरी नहीं लिखायी है, और जो रात को वहीं रह जाती? आखिर तुम कोई महराजिन क्यों नहीं रख लेते? क्या जिन्दगी भर मुझी को पीसते रहोगे?

उमानाथ ने उसकी तरफ आहत विस्मय की आँखों से देखा। उसके बिगड़ने का कोई कारण उनकी समझ में न आया। रूपकुमारी से उन्होंने हमेशा निरापद सहयोग पाया है, निरापद ही नहीं, सहानुभूतिपूर्ण भी। उन्होंने कई बार उससे महराजिन रख लेने का प्रस्ताव खुद किया था, पर उसने बराबर यही जवाब दिया कि आखिर में बैठे-बैठे क्या करूँगी? चार-पाँच रुपये का खर्च बढ़ाने से क्या फायदा? यह पैसे तो बच्चों के मक्खन में खर्च होते हैं।

और आज वह इतनी निर्ममता से उलाहना दे रही है, जैसे गुस्से में भरी हो।

अपनी सफाई देते हुए बोले-महराजिन रखने के लिए तो मैंने खुद तुमसे कई बार कहा।

'तो लाकर रख क्यों न दिया? मैं उसे निकाल देती तो कहते!'

'हाँ यह गलती हुई।'

'तुमने कभी सच्चे दिल से नहीं कहा, रूपकुमारी ने और भी प्रचण्ड होकर कहा-तुमने केवल मेरा मन लेने के लिए कहा। मैं ऐसी भोली नहीं हूँ कि तुम्हारे मन का रहस्य न समझूँ। तुम्हारे दिल में कभी मेरे आराम का विचार आया ही नहीं। तुम तो खुश थे कि अच्छी लौंडी मिल गयी है। एक रोटी खाती है और चुपचाप पड़ी रहती है। महज खाने और कपड़े पर। यह भी जब घर की जरूरतों से बचे। पचहत्तर रुपल्लियाँ लाकर मेरे हाथ पर रख देते हो और सारी दुनिया का खर्च। मेरा दिल ही जानता है, मुझे कितनी कतर-ब्योंत करनी पड़ती है। क्या पहनूँ और क्या ओढ़ूँ! तुम्हारे साथ जिन्दगी खराब हो गयी! संसार में ऐसे मर्द भी हैं, जो स्त्री के लिए आसमान के तारे तोड़ लाते हैं। गुरुसेवक ही को देखो, दूर क्यों जाओ। तुमसे कम पढ़ा है, उम्र में तुमसे कहीं कम है, मगर पाँच सौ का महीना लाता है, और रामदुलारी रानी बनी बैठी रहती है। तुम्हारे लिए यही 75 रुपये बहुत हैं। राँड़ मौंड़ में ही मगन! तुम नाहक मर्द हुए, तुम्हें तो औरत होना चाहिए था। औरतों के दिल में कैसे-कैसे अरमान होते हैं। मगर मैं तो तुम्हारे लिए घर की मुर्गी का बासी साग हूँ। तुम्हें तो कोई तकलीफ होती नहीं। तुम्हें तो कपड़े भी अच्छे चाहिए, खाना भी अच्छा चाहिए, क्योंकि पुरुष हो, बाहर से कमाकर लाते हो। मैं चाहे जैसे रहूँ तुम्हारी बला से।'

वाग्बाणों का यह सिलसिला कई मिनट तक जारी रहा,